Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

रघुवंश महाकाव्य में राजा दिलीप के शीलनिरूपण का एक अध्ययन

मनोज कुमार सिंह

C-204, पुष्पांजलि इन्क्लेव, उत्तरी मंदिरी, पटना, बिहार

शोध-सार

नेता काव्य का महत्त्वपूर्ण अंग है । कथा को गति प्रदान कने का साधन नेता ही है । 'नेता' शब्द का अभिप्राय यहाँ काव्य के मुख्य पात्र से है । अन्य पात्र इस नेता के ही सहयोगी होते हैं । अतएव समग्र पात्रों की अभिव्यक्ति 'नेता' शब्द से ही होती है ।

काव्य में पात्र कथा की प्रकृति के अनुसार दो प्रकार के होते हैं। यदि कथावस्तु प्रख्यात होती है तो उसके पात्र भी ऐतिहासिक या प्रख्यात ही होते है । साथ ही कुछ पात्र काल्पनिक भी होते हैं, जो काव्य में मुख्यत: कवि-भावनाओं के संवाहक होते है । यद्यपि काव्यकार पात्रों को अपने विचारों के अनुरूप ही चित्रित करता है, क्योंकि प्रख्यात पात्रों के शीलनिरूपण में यह उन्मुक्त नहीं होता, क्योंकि पात्र के मूलचरित्र की रक्षा अनिवार्य होती है । काल्पनिक पात्र पूर्णतया कवि के मनोनुरूप होते हैं । प्रस्तुत आलोच्य महाकाव्यों में कथावस्तु प्रख्यात ही है । अतएव पात्र भी वैसे ही हैं । कवि को स्वमत्यनुरूप पात्रों के सृजन का अवसर नहीं मिला है । तथापि कविय

ने पात्रों के चरित्र में कुछ-कुछ परिमार्जन किया है और अपनी बातों को, भावनाओं को उन्हीं के माध्यम से व्यक्त भी किया है ।

शब्द-संकेत- शीलनिरूपण, स्वमत्यनुरूप, परिमार्जन, आलोच्य

भूमिका

राजा दिलीप का परिचय

ये वैवस्वत मनु के वंश में उत्पन्न प्रतापी राजा हैं । कालिदास के रघुवंश महाकाव्य का आरंभ इनके चरित्र से ही हुआ है ।

रूप-सौंदर्य-इनका रूप सौंदर्य जितना आकर्षक है, आन्तरिक गुण भी उतने ही प्रभावशाली हैं । इनकी छाती विशाल है, कन्धे वृषभ कन्ध की तरह उन्नत है । शालवृक्ष के समान लम्बी भुजायें हैं । लगता है कि सम्पूर्ण क्षत्रियों का धर्म ही विग्रह रूप में उत्पन्न हो गया है । ये आकार में जितना सुन्दर हैं, बुद्धि भी तदनुरूप है । ये अपनी बुद्धि का सदुपयोग शास्त्रों के अभ्यास में करते हैं । वे केवल शास्त्रों का अध्ययन मात्र नहीं करते, अपितु उसे जीवनान्वित भी करते हैं । वे शास्त्रों के बताये नियमानुसार ही कार्य करते हैं । शास्त्रानुमोदित कर्म करने से उनका समुचित फल भी मिलता है । वे उदार प्रकृति के व्यक्ति हैं, शरणागत-रक्षक हैं, दीन एवं आर्त्तजनों के आश्रयदाता हैं ।[1]

वे शरीरतः इतना सुन्दर हैं कि दर्शकों की दृष्टि वरवश उनकी ओ

आकृष्ट हो जाती है न केवल मनुष्य अपितु पशु-जगत् के संवेदनशील प्राणी सहज भी आकृष्ट हो जाते हैं ।[2] गौ नन्दिनी पर आक्रमण करने वाला हिंसक सिंह भी इनका रूप-सौंदर्य देखकर विभोर हो उठता है । एक सामान्य गौ के लिए कान्तिमान् शरीर न्योच्छावर करना मूर्खता मात्र पतीत होता है ।

धर्मप्रियता–राजा दिलीप प्रकृतितः धार्मिक हैं । धर्म में इनकी प्रगाढ़ आस्था एवं विश्वास है । यज्ञ-यागादि में इनका अखण्ड विश्वास है । इन्होंने निन्यान्बे अश्वमेघ यज्ञ करके विश्राम लिया था । इन्द्र की मर्यादा की रक्षा के लिए सौवाँ यज्ञ नहीं किया था । रघु के पिता को सौंवे यज्ञ के फल की प्राप्ति करवायी ।

नियुज्य तं होमतुरङ्गरक्षणे
धनुर्धरं राजसुतैरनुद्रुतम् ।
अपूर्णमेकेन शतक्रतूपमः
शतं क्रतूनामपविघ्नमाप सः ।।[1]

दिलीप ने स्वयं कहा है कि भगवान शंकर मेरे पूज्य है और

अग्निहोत्र करनेवाले गुरुजन भी सम्माननीय हैं ।

मान्यः स ने स्थावरजंगमानां
सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतः
गुरोरपीदं धनमाहिताग्ने,
र्नश्यत्पुरस्तादनुपेक्षणीयम् ।।[2]

देवी-देवताओं के प्रति इनका श्रद्धाभाव स्वतः व्यक्त होता है ।

व्रतोपवास इनके जीवन के अंग हैं । जैसे ही गुरु वसिष्ठ ने कहा कि कामधेनु की पुत्री मेरे आश्रम में है, आप उसकी सेवा करें, उसकी प्रसन्नता से ही आपको वंश चलाने वाला पुत्र होगा, तो वे सद्यः स्वीकार कर लेते हैं और इक्कीस दिनों तक पूरी तत्परता के साथ उसकी सेवा करते हैं । जैसे गुरु के आदेश व्रत आरंभ करते है, वैसे ही उनकी अनुमति से विरमित भी करते हैं । तभी तो नन्दिनी के द्वारा आदेश दिये जाने पर भी वे व्रत को पूरा नहीं मानते । राजा दिलीप की यह तत्परता उनकी अभिरुचि को व्यक्त करती है । गौ-सेवा भारतीय धर्म-संस्कृति का एक प्रधान अंग है । दिलीप ने अपने गौ सेवा व्रत के द्वारा उसे सिद्ध कर दिया । जहाँ भी गौ सेवा की चर्चा आती है राजा दिलीप को ही उदाहरण दिया जाता है । वे गौ को मातृवत् पूजननीया मानते है । कवि ने लिखा है-

ददर्श राजा जननीमिव स्वां

गामग्रतः प्रस्रविणीं न सिंहम् ।[1]

यज्ञ, याग, व्रत, उपवास आदि धर्म के ब्राह्य रूप है । इनमें राजा दिलीप की पूर्ण आस्था है ।

दयालुता – दया, सहिष्णुता, त्यागशीलता दिलीप के सहज गुण । दिलीप की दृष्टि क्षणभर के लिए पर्वतीय सौंदर्य की ओर चली जाती है । वश इतनी-सी भूल ने संकट पैदा कर दिया । सिंह ने गौ नन्दिनी पर आक्रमण कर दिया । नन्दिनी भयभीत होकर रॉभने लगी । वह कातर दृष्टि से दिलीप की ओर देखने लगी । राजा का ध्यान टूटा, गौ की ओर देखा । उसकी आर्त्त ध्वनि एवं कातर दृष्टि ने राजा के हृदय को विदीर्ण कर दिया । कवि ने राजा की दयालुता व्यक्त करते हुए लिखा है–

धेन्वा तदध्यासितकातरक्ष्या

निरीक्ष्यमाणः सुतरां दयालुः ।।[2]

त्यागशीलता तो ऐसी कि एक गौ की रक्षा के लिए अपने प्राण देने के लिए तैयार हो जाते है ।[1] इस उद्धरण से राजा दिलीप की कर्तव्यपरायणता भी विदित होती है ।

इनके हृदय में गुरुजनों के प्रति अपार निष्ठा है । राजा जैसे ही आश्रम में पहुँचे, सबसे पहले गुरु और गुरुपत्नी अरून्धती के पैर पकड़े ।

तयोर्जगृहतुः पादान् राजा राज्ञी च मागधी ।

तौ गुरुर्गुरुपत्नी च प्रीत्या प्रतिनन्दतुः ।।[1]

राजा की श्रद्धा और आदरभाव देखकर वसिष्ठ औ पत्नी अरुन्धती बहुत प्रसन्न हुए । पूर्वजों के प्रति भी राजा की अटूट श्रद्धा है । वे समयानुसार पितृ-तर्पण एवं पिण्डदान किया करते हैं । वे जानते है कि देव, पितृ और ऋषिऋणों का चुकाना अनिवार्य होता है । इनकी महती चिन्ता है कि मैं निःसंतान हूँ । मेरे बाद पितरों का तर्पण कौन करेगा ? जलाञ्जलि कौन देगा ? पितर इनके लिए पूज्य हैं । ये चाहते हैं कि पितृ-ऋण से उद्धार हो जाय ।

यशःकामना – राजा दिलीप संयम हैं, धर्म-निष्ठ हैं और कर्तव्यपरायण हैं । ये कर्म करते है अपना कर्तव्य समझकर । प्रजापालन इनका मुख्य धर्म है । इन्हें सांसारिक धनैश्वर्य के प्रति कोई राग, लिप्सा या लोभ नहीं है । इनकी लिप्सा एकमात्र यश के प्रति है । एक तो चारित्रिक कलंक के विषय में ये सावधान हैं और यश मिले इसके लिए सचेष्ट भी है । नन्दिनी गुरु वसिष्ठ की धेनु

है, उनकी सम्पत्ति है और दिलीप की धरोहर है । धरोहर की

रक्षा इनका कर्तव्य है । धरोहर की रक्षा का भा अवश्य होता है, पर

उसके विनाश या उपभोग में राजा सिंह के बार-बार आग्रह करते हैं वह उनके यशः शरीर के प्रति दयालु हो– '....यशः शरीरे भव मे दयालुः ।[2] दिलीप वैसे प्राणों को धारण किये रहने के पक्ष में कदापि नहीं है जो लोकनिन्दा से मलिन हो चुका है ।[1] ये प्राण निन्दाजन्य मलिनता से कैसे बचेंगे, तो मात्र अपने कर्तव्य के पालन से ।[2] अपने कर्म पथ पर निरत रहने से किसो कुवृत्ति में मन प्रवृत्त नहीं होगा और न कलंक लगेगा । ऐसी निष्कलंकता बनाये रखते हुए सत्कर्म करने से यश की प्राप्ति होगी । वह यश उज्ज्वल होगा अनश्वर होगा, अमर होगा । राजा दिलीप ने केवल स्वयं अपितु अपनी सन्तान को भो निष्कलंक देखना चाहते है । निःसन्तानता उनके लिए कष्टमय है । यदि पुत्र हो तो यशस्वी हो–

ततः समानीय स मानितार्थी

सुदक्षिणायां तनयं ययाचे ।।[3]

सुन्दर कर्म करने वाला इतिहास में अमर और सूर्यवंश का नाम प्रसिद्ध करने वाला है ।

तेजस्विता– राजा दिलीप संयतेन्द्रिय है, गार्हस्थ्य जीवन व्यतीत करते हैं । लेकिन ये किसी आश्रमवासी तपस्वी के कम तपस्वी नहीं है । महर्षि वसिष्ठ ने उनकी तपस्विता स्वीकार की है । तपः जन्य तेज से उनका भाल देदीप्यमान है । गोचारण हेतु वन में जाते हुए दिलीप ने अपने समस्त राजचिह्न त्याग दिये हैं, तथापि उनके आंगिक तेज विशेष से सहज ही अनुमान हो जाता है कि ये राजलक्ष्मी को धारण करने वाले हैं ।[1] अभिप्राय यह है कि उनके बाह्य रूप से ही अन्तः के गुणों का सहजप्रकाशन होता है ।

पराक्रम– राजा दिलीप उत्साही, पराक्रमी एवं महान् वीर हैं । अपने शौर्य से ही ये राज्य की रक्षा करते हैं । अपने शरीर की रक्षा के लिए भी इन्हें किसी दूसरे रक्षक की आवश्यकता नहीं है ।

व्रताय तेनानुचरेण धेनो–

न्यर्षेधि शेषोऽप्यनुयायि वर्गः ।
न चान्यतस्तस्य शरीरक्षा

स्ववीर्य गुप्ता हि मनोः प्रसूति ।।[2]

इनके शौर्य का प्रभाव केवल प्रजाओं पर ही नहीं, समीपवर्ती अन्य राजाओं पर एवं प्राकृतिक तत्त्वों पर भी था । इन्दुमती स्वयंवर में

सुनन्दा अज का परिचय देती हुई दिलीप के विषय में कहती है कि राजा दिलीप के शासन करते समय क्रीड़ास्थल पर मद पीकर सोयी हुई स्त्रियों के वस्त्रों को वायु भी नहीं छू सकती थी, तो फिर किसी दूसरे पुरुष को क्या बात ?

प्रजा सेवा– राजा दिलीप एक कुशल शासक हैं । उनके शासन काल में कोई धर्मभ्रष्ट नहीं है । तस्करता तो उनके राज्य में है ही नहीं । तस्करी केवल शास्त्रों में निहित हो गयी थी ।[1] वे कभी पूर्वाग्रह से प्रेरित होक किसी को दण्ड नहीं देते । लोगों को सन्मार्ग में प्रेरित करने मात्र के लिए अपराधी को दण्ड देते हैं, वह भी नीतिशास्त्रों के नियमानुसार ही ।[2] वे प्रजाओं से षष्ठांश कर के रूप में लेते हैं, लेकिन उससे अपना कोष नहीं भरते है, अपितु उसे प्रजाओं के अधिकाधिक कल्याण में खर्च कर देते हैं ।[3] तत्परतापूर्वक प्रजा की रक्षा करने, उनका भरण-पोषण करने तक उनके सर्वविध कल्याणकारी कार्य करने से वे प्रजाओं के श्रद्धापात्र बन गये हैं । उन प्रजाओं के वास्तविक पिता तो ये हैं और उनके अपने पिता जनक मात्र हैं अर्थात् वे तो केवल जन्म के कारण भूत ही हैं, पालन के दायित्व का निर्वाह तो स्वयं राजा ही करते हैं ।

ग्रामीण जन का राजा दिलीप के प्रति अपूर्व श्रद्धा है, आदर है ।

वसिष्ठ के आश्रम की ओर जाते हुए राजा दिलीप को मार्ग में मिलने वाले ग्रामवासी नवनीता कि वस्तुएँ उपहार स्वरूप देते हैं । दिलीप स्नेहपूर्वक उन्हें ग्रहण करते है और उनका सम्मान स्वीकार करते है । राजा–प्रजा का ऐसा उदात्त प्रेम संबंध इतिहास में मिलना दुर्लभ है ।

दिलीप की उदात्तता, त्यागशीलता समर्पण आदि गुणों के प्रति देवता लोग भी नतमस्तक हो जाते हैं और उनपर पुष्पवृष्टि करके उनके गुणों का समादर करते है ।[4]

सहायक ग्रन्थ-सूची

1- आधुनिक काव्य में सौंदर्य भावनाμले कुमारी शकुन्तला शर्मा, प्रका-सस्वती मंदिर, जतबर, बनारसी-1951 ।

2- आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहासμले डॉ हीरालाल शुक्ल, प्रका-रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1967

3- आर्यासहस्रारत्मμडॉ जगन्नाथ पाठक, प्रका-गंगानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, चन्द्रशेखर आजाद पार्क, इलाहाबाद, 1945 ।

4- औचित्य विचार चर्चाμक्षेमेन्द्र हरिदास संस्कृतग्रन्थमाला काशी, 1933

5- उपमा कालिदासस्यμडॉ शशिभूषण दास गुप्त, प्रका-नेशनल पब्लिशित हाउस, दिल्ली 1962

6- उत्तररामचरितμले-भवभ्ूाति, प्रका-रामनारायण लाल, बेनीप्रसाद, इलाहाबाद-2, 1961